विषय-परिचय

अग्रायणीय पूर्वकी पंचम वस्तु चयनलब्धिके अन्तर्गत २० प्राभृतोंमें चतुर्थ प्राभृतका नाम ' कर्मप्रकृति ' है। इसमें कृति व वेदना आदि २४ अनुयोगद्वार हैं। इनमेंसे कृति व वेदना नामक २ अनुयोगद्वार षट्खण्डागमके ' वेदना ' नामसे प्रसिद्ध इस चतुर्थ खण्डमें वर्णित हैं। उनमें कृति अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा पूर्व प्रकाशित पुस्तक ९ में विस्तारपूर्वक की जा चुकी है। वेदना महाधिकारके अन्तर्गत निम्न १६ अनुयोगद्वार हैं- (१) वेदनानिक्षेप (२) वेदनानय-विभाषणता (३) वेदनानामविधान (४) वेदनाद्रव्यविधान (५) वेदनाक्षेत्रविधान (६) वेद-नाकालविधान (७) वेदनाभावविधान (८) वेदनाप्रत्ययविधान (९) वेदनास्वामित्वविधान (१०) वेदना-वेदनाविधान (११) वेदनागतिविधान (१२) वेदना-अन्तरविधान (१३) वेदना-संनिकर्षविधान (१४) वेदनापरिमाणविधान (१५) वेदनाभागाभागविधान और (१६) वेदना-अल्पबहुत्व। प्रस्तुत पुस्तकमें इनमेंसे आदिके चार अनुयोद्वार प्रगट किये जा रहे हैं।

१ वेदनानिक्षेप

इस अनुयोगद्वारमें वेदनाको नामवेदना, स्थापनावेदना, द्रव्यवेदना और भाववेदना; इन चार भेदोंमें निक्षिप्त किया गया है। बाह्य अर्थका अवलम्बन न करके अपने आपमें प्रवृत्त ' वेदना ' शब्दको नामवेदना कहा गया है। ' वह वेदना यह है ' इस प्रकार अभेदपूर्वक वेदना स्वरूपसे व्यवहृत पदार्थ स्थापनावेदना कहा जाता है। वह सद्भावस्थापना और असद्भाव-स्थापनाके भेदसे दो प्रकार है। वेदनाका अनुसरण करनेवाले पदार्थमें वेदनाके आरोपको सद्-भावस्थापना और उसका अनुसरण न करनेवाले पदार्थमें उक्त वेदनाके आरोपको असद्भाव-स्थापना बतलाया है।

द्रव्यवेदनाके आगमद्रव्यवेदना और नोआगमद्रव्यवेदना दो ये भेद किये गये हैं। इनमेंसे नोआगमद्रव्यवेदनाके ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त इन तीन भेदोंके अन्तर्गत ज्ञायक-शरीरके भी भावी, वर्तमान और समुध्यात (त्यक्त) ये तीन भेद बतलाये हैं। तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यवेदनाके कर्म व नोकर्म रुप दो भेदोंमेंसे कर्मवेदना ज्ञानावरणादिके भेदसे आठ प्रकारकी और नोकर्मवेदना सचित्त, अचित्त एवं मिश्रसे भेदके तीन प्रकारकी बतलाई गई है। इनमें सिद्ध जीवद्रव्यको सचित्त द्रव्यवेदना; पुद्गल, काल, आकाश, धर्म व अधर्म द्रव्योंको अचित्त द्रव्यवेदना; तथा संसारी जीवद्रव्यको मिश्रवेदना कहा गया है।

भाववेदना आगम और नोआगम रूप दो भेदोंमें विभक्त की गई है। इनमें वेदनाअनुयोग-द्वारके जानकार उपयोग युक्त जीवको आगमद्रव्यवेदना निर्दिष्ट करके नोआगमभाववेदनाके जीवभाववेदना और अजीवभाववेदना ये दो भेद बतलाये हैं। उनमें जीवभाववेदना औदयिक अदिके भेदसे पांच प्रकार तथा अजीवभाववेदना औदयिक व पारिणामिकके भेदसे दो प्रका-रकी निर्दिष्ट की गई है।

२ वेदनानयविभाषणता

वेदनानिक्षेप अनुयोगद्वारमें बतलाये गये वेदनाके उन अनेक अर्थोंमेंसे यहां कौनसा अर्थ प्रकृत है, यह प्रगट करनेके लिये प्रस्तुत अनुयोगद्वारकी आवश्यकता हुई। तदनुसार यहां यह बतलाया गया है कि नैगम, संग्रह और व्यवहार, इन तीन द्रव्यार्थिक नयोंके अवलम्बनसे वेदनानिक्षेपमें निर्दिष्ट सभी प्रकारकी वेदनायें अपेक्षित हैं। ऋजुसूत्र नय एक स्थापनावेदनाको स्वीकार नहीं करता, शेष सब वेदनाओंको वह भी स्वीकार करता है। स्थापनावेदनाको स्वीकार न करनेका कारण यह है कि स्थापनानिक्षेपमें पुरुषसंकल्पके वशसे पदार्थको निज स्वरूपसे ग्रहण न करके अन्य स्वरूपसे ग्रहण किया जाता है। यह ऋजूसूत्र नयकी दृष्टिमें सम्भव नहीं हैं, क्योंकि, एक समयवर्ती वर्तमान पर्यायको विषय करनेवाले इस नयके अनुसार पदार्थका अन्य स्वरूपसे परिणमन हो नहीं सकता शब्दनय नामवेदना और भाववेदनाको ही ग्रहण करता है, स्थापनावेदना और द्रव्यवेदनाको वह ग्रहण नहीं करता। यहां द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा बन्ध, उदय व सत्व स्वरूप नोआगमकर्मद्रव्यवेदनाको; ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा उदयगत कर्मवेदनाको, तथा शब्दनयकी अपेक्षा कर्मके उदय व बन्धसे जनित भाववेदनाको प्रकृत बतलाया गया है।

३ वेदनानामविधान

बन्ध, उदय व सत्व स्वरूपसे जीवमें स्थित कर्मरूप पौद्गलिक स्कन्धोंमें कहां कहां किस किस नयका कैसा प्रयोग होता है, इस प्रकार नयाश्रित प्रयोगप्ररूपणाके लिये प्रस्तुत अनुयोग–द्वारकी आवश्यकता बतलाई गई है। तदनुसार नैगम और व्यवहार नयके आश्रयसे नोआगम–द्रव्यकर्मवेदना ज्ञानावरणीय आदिके भेदसे आठ प्रकारकी कही गई है, कारण यह कि यथा–क्रमसे उनके अज्ञान, अदर्शन, सुख–दुखवेदन, मिथ्यात्व व कषाय, भवधारण, शरीररचना, गोत्र एवं वीर्यादिविषयक विघ्न स्वरूप आठ प्रकारके कार्य देखे जाते हैं। यह हुई वेधनाविधानकी प्ररूपणा। नामविधानकी प्ररूपणामें ज्ञानावरणीय आदि रूप कर्मद्रव्यको ही 'वेदना' कहा गया है। संग्रहनयकी अपेक्षा सामान्यसे आठों कर्मोंको एक वेदना रूपसे ग्रहण किया गया है, क्योंकि, एक ही वेदना शब्दसे समस्त वेदनाविशेषोंकी अविनाभाविनी एक वेदना जातिकी उपलब्धि होती है। ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना आदिका निषेध कर एक मात्र वेदनीय कर्मको ही वेदना स्वीकार किया गया है, क्योंकि, लोकमें सुख–दुखके विषयमें ही वेदना शब्दका व्यवहार देखा जाता है। शब्दनयकी अपेक्षा वेदनीय कर्मद्रव्यके उदयसे उत्पन्न सुख–दुखका अथवा आठ कर्मोंके उदयसे उत्पन्न जीवपरिणामको ही वेदना कहा गया है, क्योंकि शब्दनयका विषय द्रव्य सम्भव नहीं है।

४ वेदनाद्रव्यविधान

वेदनारूप द्रव्यके सम्बन्धमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट एवं जघन्य आदि पदोंकी प्ररूपणाका नाम वेदनाद्रव्यविधान है। इसमें पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व, ये तीन अनुयोगद्वार ज्ञातव्य बतलाये गये हैं।

१) पदमीमांसामें ज्ञानावरणीय आदि द्रव्यवेदनाके विषयमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य,

अजघन्य, सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, ओज❀, युग्म,⊗ ओम, विशिष्ट और नोम-नोविशिष्ट; इन १३ पदोंका यथासम्भव विचार किया गया है। इसके अतिरिक्त सामान्य चूंकि विशेषका अविनाभावी है, अत एव उक्त १३ पदोंमेंसे एक एक पदको मुख्य करके प्रत्येक पदके विषयमें भी शेष १२ पदोंकी सम्भावनाका विचार किया गया है। इस प्रकार ज्ञानावरणादि प्रत्येक कर्मके सम्बन्धमें १६९ { १३ + (१३ × १२) = १६९ } प्रश्न करके उक्त पदोंके विचारका दिग्दर्शन कराया गया है। उदाहरणके रूपमें ज्ञानावरणको ही ले लें। उसके सम्बन्धमे इस प्रकार विचार किया गया है--

ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यसे क्या उत्कृष्ट है क्या अनुत्कृष्ट है, क्या जघन्य है, क्या अजघन्य है, क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है, क्या अध्रुव है, क्या ओज है, क्या युग्म है, क्या ओम है, क्या विशिष्ट है, और क्या नोम-नोविशिष्ट है; इस प्रकार १३ प्रश्न करके उनके ऊपर क्रमशः विचार करते हुए कहा गया है कि (१) उक्त ज्ञानावरणीयवेदना द्रव्यसे कथंचित् उत्कृष्ट है, क्योंकि गुणित कर्मांशिक सप्तम पृथिवीस्थ नारकी जीवके उस भवके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट वेदना पाई जाती है। (२) कथंचित् वह अनुत्कृष्ट है, क्योंकि, गुणित-कर्मांशिकको छोडकर शेष सभी जीवोंके ज्ञानावरणीयका द्रव्य अनुत्कृष्ट पाया जाता है। (३) कथंचित् वह जघन्य है, क्योंकि क्षपितकर्मांशिक क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीवोंके इस गुण-स्थानके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणीयका द्रव्य जघन्य पाया जाता है। (४) कथंचित् वह अजघन्य है, क्योंकि, उक्त क्षपितकर्मांशिकको छोडकर अन्य सब प्राणियोंमें ज्ञानावरणीयोंका द्रव्य अज-घन्य देखा जाता हैं। (५) कथंचित् वह सादि है, क्योंकि, उत्कृष्ट आदि पदोंका परिवर्तन होता रहता है, वे शाश्वतिक नहीं है। (६) कथंचित् वह अनादि है, क्योंकि, जीव व कर्मका बन्धसामान्य अनादि है। उसके सादित्वकी सम्भावना नहीं है, (७) कथंचित् वह ध्रुव है, क्योंकि, अभव्यो तथा अभव्य समान भव्य जीवोंमें भी सामान्य स्वरूपसे ज्ञानावरणका विनाश सम्भव नहीं है। (८) कथंचित् वह अध्रुव है, क्योंकि, केवल-ज्ञानी जीवोंमें उसका विनाश देखा जाता है। इसके अतिरिक्त उक्त उत्कृष्ट आदि पदोंका शाश्वतिक अवस्थान सम्भव न होनेसे उनमें परिवर्तन भी होता ही रहता है। (९) कथंचित् वह युग्म है, क्योंकि, प्रदेशोंके रूपमें ज्ञानावरणीयका द्रव्य सम संख्यात्मक पाया जाता है। (१०) कथंचित् वह ओज है, क्योंकि, उसका द्रव्य कदाचित् विषम संख्याके रूपमें भी पाया जाता

❀ ओजका अर्थ विषम संख्या है। इसके २ भेद है- कलिओज और तेजोज। जिस राशिमें ४ का भाग देनेपर ३ अंक शेष रहते हैं वह तेजोज (जैसे १५ संख्या), तथा जिसमें ४ का भाग देनेपर १ अंक शेष रहता है वह कलिओज (जैसे १३ संख्या) कही जाती है।

⊗ युग्म का अर्थ सम संख्या है। इसके दो भेद है-- कृतयुग्म और बादर युग्म (बादर यह द्वापर शब्दका विगडा हुआ रूप प्रतीत होता है। भवगतीसूत्र आदि श्वेताम्बर ग्रंथोंमें दावर-द्वापर शब्द ही पाया जाता है)। जिस राशिमें ४ का भाग देनेपर कुछ शेष नहीं रहता वह कृतयुग्म राशि कही जाती है (जैसे १६ संख्या)। जिस राशिमें ४ का भाग देनेपर २ अंक शेष रहते है वह बादरयुग्म कही जाती है (जैसे १४ संख्या)।

है। (११) वह कथंचित् ओम है, क्योंकि, उसके प्रदेशोंमें कदाचित् हानि देखी जाती है। (१२) कथंचित् वह विशिष्ट है, क्योंकि कदाचित् उसके प्रदेशोंमें व्ययकी अपेक्षा आयकी अधिकता देखी जाती है। (१३) कथंचित् वह नोम-नोविशिष्ट है, क्योंकि, प्रत्येक पदके अवयवकी विवक्षामें वृद्धि और हानि दोनोंकी सम्भावना नहीं है।

इसी प्रकारसे उत्कृष्ट ज्ञानावरणीयवेदना है, क्या अनुत्कृष्ट, है क्या जघन्य है इत्यादि स्वरूपसे एक एक पदको विवक्षित करके उसके विषयमें भी शेष १२ पदोंकी सम्भावनाका विचार किया गया हैं (देखिये पृ ३० पर दी गई इन पदोंकी तालिका)।

(२)स्वामित्व अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके उत्कृष्ट व अनुत्कृष्ट आदि पद किन किन जीवोंमें किस किस प्रकारसे सम्भव है, इस प्रकारसे उनके स्वामियोंका विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। उदाहरणार्थ ज्ञानावरणीयको लेकर उसकी उत्कृष्ट वेदनाके स्वामीका विचार करते हुए कहा गया है कि जो जीव बादर पृथवीकायिक जीवोंमें साधिक २००० सागरोपमोंसे हीन कर्मस्थिति (७० कोडाकोडि सागरोपम) प्रमाण रहा है उनमें परिभ्रमण करता हुआ जो पर्याप्तोंमें बहुत वार और अपर्याप्तोंमें थोडे वार उत्पन्न होता है, [भववास] पर्याप्तोंमें उत्पन्न होता हुआ दीर्घ आयुवालोंमें तथा अपर्याप्तोंमें उत्पन्न होता हुआ अल्प आयुवालोंमें ही जो उत्पन्न होता है (अद्धावास), तथा दीर्घ आयुवालोंमें उत्पन्न हो करके जो सर्वलघु कालमें पर्याप्तियोंको पूर्ण करता है, जब जब वह आयुको बांधता है तत्प्रायोग्य जघन्य योगके द्वारा ही बांधता है (आयुआवास) जो उपरिम स्थितियोंके निषेकके उत्कृष्ट पदको तथा अधस्तन स्थितियोंके निषेकके जघन्य पदको करता है, (अपकर्षण–उत्कर्षण-आवास अथवा प्रदेशविन्यासावास), बहुत बहुत वार जो उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त होता है (योगावास), तथा बहुत बहुत वार जो मंद संक्लेश परिणामोंको प्राप्त होता है (संक्लेशावास) इस प्रकार उक्त जीवोंमें परिभ्रमण करके पश्चात् जो बादर त्रस पर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न हुआ है ; उनमें परिभ्रमण कराते हुए उसके विषयमें पहिलेके ही समान यहां भी भवावास, अद्धावास आयुआवास अपकर्षण-उत्कर्षणआवास योगावास और संक्लेशावास, इन आवासोंकी प्ररूपणा की गई है। उक्त रीतिसे परिभ्रमण करता हुआ जो अन्तिम भवग्रहणमें सप्तम पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ है, उनमें उत्पन्न हो करके प्रथम समयवर्ती आहारक और प्रथम समयवर्ती तद्भवस्थ होते हुए जिसने उत्कृष्ट योगसे आहरको ग्रहण किया है, उत्कृष्ट वृद्धिसे जो वृद्धिगत हुआ है, सर्वलघु अन्तर्मुहूर्त कालमें जो सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ है, वहां ३३ सागरोपम काल तक जो रहा है, बहुत बहुत वार जो उत्कृष्ट योगस्थानोंको तथा बहुत बहुत वार बहुत संक्लेश परिणामोंको जो प्राप्त हुआ है, उक्त प्रकारसे परिभ्रमण करते हुए जीवितके थोडेसे अवशिष्ट रहनेपर जो योगयवमध्यके ऊपर अन्तर्मुहूर्त काल रहा है, अन्तिम जीवगुणहानिस्थानान्तरमें जो आवलीके असंख्यातवें भाग रहा है, द्विचरम व त्रिचरम समयमें उत्कृष्ट सक्लेशको प्राप्त हुआ है, तथा चरम व द्विचरम समयमें जो उत्कृष्ट योगको प्राप्त हुआ है; ऐसे उपर्युक्त जीवके नारक भवके अन्तिम समयमें स्थित होनेपर ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यसे उत्कृष्ट होती है (यही गुणित कर्मांशिक जीवका लक्षण है)।

उक्त जीवके उतने समयमें कितने द्रव्यका संचय होता है तथा वह संचय भी उत्त-रोत्तर किस क्रमसे वृद्धिगत होता है, इत्यादि अनेक विषयोंका वर्णन श्री वीरसेन स्वामीने गणित प्रक्रियाके अवलम्बनसे अपनी धवला टीकाके अन्तर्गत बहुत विस्तारसे किया है। आगे चलकर आयुको छोडकर शेष ६ कर्मोंकी उत्कृष्ट वेदनाके स्वामियोंकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके ही समान बतला करके फिर आयु कर्मकी उत्कृष्ट वेदनाके स्वामीकी प्ररूपणा करते हुए बतलाया गया है कि पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाला जो जीव जलचर जीवोंमें पूर्वकोटि मात्र आयुको दीर्घ आयुबन्धक काल, तत्प्रायोग्य संक्लेश और तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगके द्वारा बांधता है; योग-यवमध्यके ऊपर अन्तर्मुहूर्त काल रहा है, अन्तिम जीवगुणहानिस्थानान्तरमें आवलीके असंख्यातवें भाग रहा है, तत्पश्चात् क्रमसे मृत्युको प्राप्त होकर पूर्वकोटि आयुवाले जलचर जीवोंमें उत्पन्न हुआ है, वहांपर सर्वलघु अन्तर्मुहूर्तमें सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ है, दीर्घ आयुबन्धक कालमें तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगके द्वारा पूर्वकोटि प्रमाण जलचर-आयुको दुबारा बांधता है, योगयव-मध्यके ऊपर अन्तर्मुहूर्त काल रहा है, अन्तिम गुणहानिस्थानान्तरमें आवलीके असंख्यातवें भाग रहा है, तथा जो बहुत बहुत वार साता वेदनीयके बन्ध योग्य कालसे सहित हुआ है, ऐसे जीवके अनन्तर समयमें जब परभविक आयुके बन्धकी परिसमाप्ति होती है उसी समय उसके आयु कर्मकी वेदना द्रव्यसे उत्कृष्ट होती है। सभी कर्मोंकी उत्कृष्ट वेदनासे भिन्न अनुत्कृष्ट वेदना कही गई है।

ज्ञानावरणीयकी जघन्य वेदनाके स्वामीकी प्ररूपणा करते हुए कहा गया है कि जो जीव पल्योपमके असंख्यातवें भागसे हीन कर्मस्थिति प्रमाण सूक्ष्म निगोद जीवोंमें रहा है, उनमें परिभ्रमण करता हुआ जो अपर्याप्तोंमें बहुत वार और पर्याप्तोंमें थोडे ही वार उत्पन्न हुआ है, जिसका अपर्याप्तकाल बहुत और पर्याप्तकाल थोडा रहा है, जब जब आयुको बांधता है तब तब तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगसे बांधता है, जो उपरिम स्थितियोंके निषेकके जघन्य पदको और अधस्तन स्थितियोंके निषेकके उत्कृष्ट पदको करता है, जो बहुत बहुत वार जघन्य योगस्थानको प्राप्त होता है, बहुत बहुत वार मन्द संक्लेश रूप परिणामोंसे परिणमता है, इस प्रकारसे निगोद जीवोंमें परि-भ्रमण करके पश्चात् जो बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तोंमें उत्पन्न होकर वहां सर्वलघु अन्तर्मुहूर्त कालमें सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ है, तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें मरण को प्राप्त होकर जो पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ है, जिसने वहांपर गर्भसे निकलनेके पश्चात् आठ वर्षका होकर संयमको धारण किया है, कुछ कम पूर्वकोटि काल तक संयमका परिपालन करके जो जीवितके थोडेसे शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, जो मिथ्यात्व सम्बन्धी सबसे स्तोक असंयमकालमें रहा है, तत्पश्चात् मिथ्यात्वके साथ मरणको प्राप्त होकर जो दस हजार वर्ष आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ है, वहांपर जो सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्त काल द्वारा सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ है, पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें जो सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है, उक्त देवोंमें रहते हुए जो कुछ कम दस हजार वर्ष तक सम्यक्त्वका परिपालन कर जीवितके थोडेसे शेष रहनेपर पुनः मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, मिथ्यात्वके साथ मरकर जो फिरसे बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तोंमें उत्पन्न हुआ है, वहांपर जो सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्त कालमें सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ है, पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें मृत्युको प्राप्त होकर जो सूक्ष्म निगोद पर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न हुआ है, पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र

स्थितिकाण्डकघातोंके द्वारा पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र कालमें कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके जो फिरसे भी बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तोंमें उत्पन्न हुआ है; इस प्रकार नाना भव-ग्रहणोंमें आठ संयमकाण्डकोंको पालकर, चार बार कषायोंको उपशमा कर, पल्योपमके असं-ख्यातवें भाग मात्र संयमासंयमकाण्डकों और इतने ही सम्यक्त्वकाण्डकोंका परिपालन करके उपर्युक्त प्रकारसे परिभ्रमण करता हुआ जो फिरसे भी पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ है; वहां सर्वलघु कालमें योनिनिष्क्रमण रूप जन्मसे उत्पन्न होकर जो आठ वर्षका हुआ है, पश्चात संयमको प्राप्त होकर और कुछ कम पूर्वकोटि काल तक उसका परिपालन करके जो जीवितके थोडेसे शेष रहनेपर दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षपणामें उद्यत हुआ है, इस प्रकारसे जो जीव छद्मस्थ अवस्थाके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यसे जघन्य होती है (यही क्षपितकर्मांशिकका लक्षण है)।

३ अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी जघन्य, उत्कृष्ट एवं जघन्य-उत्कृष्ट वेदनाओंका अल्पबहुत्व बतलाया गया है । इस प्रकार पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व इन ३ अनुयोगद्वारोंके पूर्ण हो जानेपर द्रव्यविधानकी चूलिकाका प्रारम्भ होता है ।

इस चूलिकामें योगके अल्पबहुत्व और योगके निमित्तसे आनेवाले कर्मप्रदेशोंके भी अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करके पश्चात् अविभागप्रतिच्छेदप्ररूपणा, वर्गणाप्ररूपणा स्पर्धकप्ररूपणा, अन्तरप्ररूपणा, स्थानप्ररूपणा, अनन्तरोपनिधा, परम्परोपनिधा, समयप्ररूपणा, वृद्धिप्ररूपणा और अल्पबहुत्वप्ररूपणा, इन १० अनुयोगद्वारोंके द्वारा योगस्थानोंकी विस्तृत प्ररूपणा की गई है ।